



OPEN ACCESS

Volume: 5

Issue: 1

Month: March

Year: 2026

ISSN: 2583-7117

Published: 11.03.2026

Citation:

उज्जवल कुमार, डॉ. अखिलेश कुमार विश्वकर्मा  
“योगवसिष्ठ महारामायण में मन का स्वरूप”  
International Journal of Innovations in  
Science Engineering and Management,  
vol. 5, no. 1, 2026, pp. 248-253.

DOI:

10.69968/ijsem.2026v5i1248-253



This work is licensed under a Creative  
Commons Attribution-Share Alike 4.0  
International License

# योगवसिष्ठ महारामायण में मन का स्वरूप

उज्जवल कुमार<sup>1</sup>, डॉ. अखिलेश कुमार विश्वकर्मा<sup>2</sup>

<sup>1</sup> पीएच.डी. शोधार्थी, लकुलिश योग विश्वविद्यालय, [ujjwalkumar5343@gmail.com](mailto:ujjwalkumar5343@gmail.com)

<sup>2</sup> असिस्टेंट प्रोफेसर, लकुलिश योग विश्वविद्यालय

## सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र मुख्य रूप से योगवसिष्ठ में वर्णित मन का दार्शनिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन किया गया है। जिसमें मुख्य रूप से मन का अर्थ, स्थान, कार्य, जीवन्मुक्ति एवं मन का सम्बंध एवं निग्रह के उपाय आदि का वर्णन किया गया है। जिसमें विवेक, वैराग्य, वासनाक्षय, मुक्ति के चार द्वारपाल एवं आत्म विचार को मन की शुद्धि का प्रमुख साधन माना गया है। इस अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि मन ही दुःख-सुख, बंधन-मोक्ष आदि का मुख्य कारण है। आज के समय में लोग मानसिक अशांति एवं अनियमित सोच से दुखी लोग के लिए योगवसिष्ठ में वर्णित मन की शिक्षा मनुष्य के लिए बहुत लाभ करी सिद्ध होती है।

**मूल शब्द-** योगवसिष्ठ, मन, चित, मनोनिग्रह, जीवनमुक्ति.

## प्रस्तावना

भारतीय दर्शन परम्परा के तमाम महान ग्रंथ जैसे योगवसिष्ठ, उपनिषद्, गीता, योगदर्शन, विवेकचुदामानी, वेदांत दर्शन जैसे ग्रंथों में मन को अति विशेष स्थान दिया गया है। इन सभी ग्रंथों के अनुसार मन किसी मनुष्य में उपस्थित एक ऐसा तत्व है, जिसके बिना मानव जीवन संभव नहीं है। मनुष्य में जिस भी प्रकार के विचार, संकल्प, श्रद्धा, निष्काम-सकाम कर्म सभी का मूल आधार मन को ही माना गया है। इस लिय भारतीय दार्शनिक ग्रंथ में मन को आत्मज्ञान एवं मोक्ष की प्राप्ति का मुख्य साधन माना गया है। यहाँ तक की जीवन में होने वाले सुख-दुःख का कारण भी मन को माना गया है।

**सर्वेषु सुखदुःखेषु सर्वासु कलनासु च। मनः कर्तृ मनो भोक्तृ मानसं विद्धि  
मानवम्॥३/११५/२४॥**

**अर्थात्** “सब सुख-दुःख और अवस्थाओं को बनाने वाला और भोगने वाला मन ही है। मनुष्य मनोमय है, अर्थात् जैसा किसी का मन वैसा ही मनुष्य होता है।” (अत्रे, 1957, पृष्ठ-251) योगवसिष्ठ भारतीय ज्ञान परम्परा का एक महान ग्रंथ है। जिसकी रचना महर्षि वाल्मीकि के द्वारा किया गया है। योगवसिष्ठ ग्रंथ मुख्य रूप से महर्षि वसिष्ठ एवं श्री राम के बिच संवाद के रूप है, जिसको मूल रूप से छः प्रकरण (अध्याय) में विभाजित किया गया है। इस ग्रंथ में मूल रूप से विवेक-वैराग्य, जगत, जीवन्मुक्ति, मोक्ष, निष्काम कर्म, मन, आत्मज्ञान, मोक्ष जैसे

गूढ़ विषयों पर तार्किक रूप से चर्चा किया गया है। योगवसिष्ठ में मन का वर्णन बहुत ही वृहद और प्रमाणिक स्तर पर किया गया है। योगवसिष्ठ के अनुसार मन ही बंधन-मोक्ष का मुख्य कारन है।

**मन एव मनुष्याणां कारणं बन्धमोक्षयोः । बन्धाय विषयासक्तं मुक्त्यै निर्विषयं स्मृतम् ॥ २॥ (अभयानन्द सरस्वती, 2012, p. 28)**

**अर्थात्** मन ही सभी मनुष्य के बंधन एवं मोक्ष का मुख्य कारण है। वह मन जो विषयों में आसक्त है, वह बंधन और सभी विषयों से रहित मन मोक्ष का कारण है।

“जगत के पदार्थों के वासना का दृढ होने का नाम बंधन है।, इन इच्छाओं से अलग हो जाने पर जो चित का क्षीण हो जाना है, उसे आत्मदर्शी तत्वज्ञानी मोक्ष कहते हैं।” (अत्रे, 1957, पृष्ठ-381, 384) आज के समय में तमाम तकनित के उपलब्ध होने के बाद भी मनुष्य भांति-भांति प्रकार के मानसिक समस्याओं से ग्रस्त है। ऐसे स्थिति में योगवसिष्ठ में वर्णित मन से सम्बंधित ज्ञान आधुनिक समय में मनुष्यों को मानसिक स्थिरता और आंतरिक शांति का राह दिखाने के लिय उपयुक्त है।

**शोध पत्र का उद्देश्य-** इस शोध पत्र के माध्यम से योगवसिष्ठ में वर्णित मन के दार्शनिक एवं विश्लेषणात्मक अध्ययन करते हुए, मन का अर्थ, स्वरूप एवं मन में उत्पन्न होने वाले विकार और विकारों को निवारण का विश्लेषण किया जायेगा, और यह स्पष्ट किया जायेगा कि योगवसिष्ठ के अनुसार मन आत्मज्ञान एवं मोक्ष की प्राप्ति के लिय कैसे सहायक है।

## मन का स्वरूप

**मन का अर्थ-** मन शब्द का निर्माण संस्कृत धातु के “मन्” धातु से बना है। जिसका मूल अर्थ चिंतन-मनन करना, संकल्प-विकल्प करने से है। “मनः संकल्पक मिन्द्रियम् सां” का सोच विचार करने वाली चित्तवृत्ति, छठी ज्ञानेन्द्रिय, वहीं अगर योगसूत्र में मन की बात करें तो यहाँ मन के लिय चित शब्द का प्रयोग किया गया है। महर्षि पतंजलि योगसूत्र में वर्णन करते हुए कहते हैं कि “योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः।” पतंजलि, 2007, सूत्र 1.2) अर्थात् यहाँ

चित में मन, बुधि एवं अहंकार तीनों का समावेश बताते हुए उनके निरोध करने की बात की गयी है।

**मन का स्थान-** योगवसिष्ठ में मन के स्थान का वर्णन करते तो मन कोई स्थूल शरीर भाग नहीं है, बल्कि सूक्ष्म शरीर का भाग है। स्वामी विष्णु शरानन्द अपनी पुस्तक में मन के स्थान का वर्णन करते हुए कहते हैं, “मन का कोई अस्तित्व नहीं है, न ही भीतर है न ही बहार है। व्यवहार दृष्टि में मन सर्वव्यापी है।” (शर्मा शरणानन्द, 1998, पृष्ठ-25) वहीं गीता में मन के स्थान का वर्णन करते हुए कहते हैं कि **इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मनः । मनसस्तु परा बुद्धिर्यो बुद्धेः परतस्तु सः ॥3/42॥**

**अर्थात्** “कर्मेन्द्रियाँ जड़ पदार्थ की अपेक्षा श्रेष्ठ हैं, मन इन्द्रियों से बढ़कर है, बुद्धि मन से भी उच्च है और वह (आत्मा) बुद्धि से भी बढ़कर है।” (भक्तिवेदांत, 1972, पृष्ठ-159) इसका तात्पर्य है कि मन का स्थान इन्द्रियों एवं बुद्धि के बिच में है।

**मन का कार्य-** भारतीय दार्शनिक ग्रंथ में मन का कोई अपना अस्तित्व नहीं माना गया है, परन्तु मन को मनुष्य जीवन का अभिन्न अंग के रूप में माना गया है। जो मुख्य रूप से संकल्प-विकल्प, किसी विषय के प्रति आसक्ति एवं घृणा का भाव एवं तमाम कल्पना एवं क्रियाएं मन की ही उत्पत्ति है। संकल्प विकल्प, इच्छा भावना एवं विचार सब मन का ही रूप है। (शर्मा शरणानन्द, 1998) कठोपनिषद में मन के स्वरूप का वर्णन करते हैं कि

**“आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु। बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च॥” 1.3.3** अर्थात् यहाँ इस श्लोक के माध्यम से आत्म को रथी, शरीर को रथ, बुद्धि को शर्धी और मन को लगाम बताया गया है। कठोपनिषद में लगाम के माध्यम से यह बताने का प्रयास किया गया है कि यदि मन असंयमित हो तो इन्द्रियाँ भी असंयमित हो जाती हैं, जो मनुष्य के लिय आत्मज्ञान एवं मोक्ष मार्ग में बाधा बनती है। (गोयन्दका, 2005, p. 123)

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि मन के संकल्प के पश्चात ही यह सम्पूर्ण सांसार एवं तमाम प्रकार के विषय-वस्तुओं का रचना होता है।

## योगवसिष्ठ में मन

योगवसिष्ठ महारामायण में जितना मन के स्वरूप का वर्णन किया गया है, उतना किसी भी विषयों का वर्णन नहीं किया गया है। आत्रेय जी अपने पुस्तक में मन का वर्णन करते हुए कहते हैं,

**गतेव सकलङ्कत्वं कदाचित्कल्पनात्मकम्। उन्मेषरूपिणी  
नाना तदैव हि मनःस्थिता ।॥3/96/17॥**

“परम चित जब स्पंदन युक्त होकर कल्प-नात्मक रूप को धारण कर के विषय से गर्भित होती है, तब वह मन होती है।” (अत्रे, 1957, पृष्ठ-224) योगवसिष्ठ में मन को सिर्फ मानसिक शक्ति तक सिमित न देखते हुए मन को इस सम्पूर्ण सृष्टी का कारण, सुख-दुःख और मन को बंधन-मोक्ष का मुख्य कारण माना गया है। “मन ही इस दुनिया में बंधन और मुक्ति बनता है।” (यादव, 2025, p. 114) सम्पूर्ण योगवसिष्ठ में मन का सबसे अधिक वर्णन होने का कारण, योगवसिष्ठ को मनोविज्ञान पर आधारित ग्रंथ के रूप में माना गया है। योगवसिष्ठ के अनुसार मानसिक और शारीरिक दुःख का मुख्य कारण मन है। “जब मनुष्य का मन विकृत हो जाता है तो शरीर के स्वस्थ होने पर भी सब निरर्थक हो जाता है। अतः अत्यधिक मानसिक रोग उत्पन्न होने का कारण मनुष्य का मन है।” (गुलेरिया, 2025) योगवसिष्ठ के अनुसार मन को जीवन्मुक्ति का प्रमुख साधन माना गया है।

**जीवन्मुक्ति एवं मन का संबंध-** योगवसिष्ठ महारामायण में जीवन्मुक्ति एवं मन का संबंध प्रत्यक्ष रूप से स्पष्ट है। यहाँ जीवन्मुक्ति का अर्थ मनुष्य के मन में आने वाले सभी वासना, अहंकार एवं संकल्प को समाप्त कर आत्मज्ञान को प्राप्त कर उसके स्वरूप में स्थित होना ही जीवन्मुक्ति है। योगवसिष्ठ के अनुसार मन ही कर्मबंधन, संकल्प-विकल्प, वासनाओं का मुख्य कारण है। जो मनुष्य के जीवन्मुक्ति में बाधा बनती है। आत्रेय जी अपने पुस्तक में वर्णन करते हुए कहते हैं कि “वासना का होना और न होना ही बंधन का मोक्ष का मुख्य कारण है।” (अत्रे, 1957, पृष्ठ-381) इसका तात्पर्य है कि मन में उत्पन्न होने वाले सभी प्रकार की वासनाएं जीवन्मुक्ति के मार्ग में बाधा बनती हैं। वही महर्षि वसिष्ठ जीवन्मुक्ति का वर्णन करते हुए कहते हैं कि

**प्रक्षीणवासना येह जीवतां जीवनस्थितिः ।**

**अमुक्तैरपरिज्ञाता सा जीवन्मुक्ततोच्यते ॥3/22/8॥**

अर्थात् “वासनाओं के क्षीण हो जाने पर जीवों की जीवन की स्थिति होती है, उसको अमुक्तपुरुष नहीं जानते हैं और उसी दशा को जीवन्मुक्ति कहते हैं।” (वाल्मीकि, 2020, p. 288) इसका तात्पर्य है कि जब तक मन में उत्पन्न होने वाले वासना, इच्छा आदि का समापन नहीं होता तब तक जीवन मुक्ति संभव नहीं है। जीवन्मुक्ति की अवस्था में मनुष्य का मन बिल्कुल शुद्ध हो जाता है और मनुष्य का चित आत्मा के स्वरूप को ग्रहण कर लेता है। आत्रेय जी अपने पुस्तक में जीवन्मुक्ति को महाभोक्ता बताते हुए हैं कि “जो किसी विषय का इच्छा न रखता हो और किसी से घृणा करता हो, सब स्वभाविक भोगों को भोगता हो, जो कुछ करते हुए भी नहीं करता हो, जो समस्त लोक व्यवहार को बिना खिन्न मन के साक्षी के सामान इच्छा रहित होकर देखता हो” (अत्रे, 1957, पृष्ठ-466) ऐसे मनुष्य को जीवन्मुक्त का संज्ञा दिया गया है। जो मन में उत्पन्न होने वाले वासना के समाप्ति के बिना संभव नहीं है।

**मन के विकार-** योगवसिष्ठ महारामायण के मन स्वरूप बहुत ही शुद्ध एवं शांत है।

**चित्राधिकारवशतो विचित्रा विकृताभिधाः । यथा याति  
नरः कर्मवशाद्याति तथा मनः ।॥3/96/44॥** (वाल्मीकि,

2020, p. 602)

जिस प्रकार किसी मनुष्य नाम उसके काम और समय के अनुसार बदलते रहता है, ठीक उसी प्रकार मन का नाम उसके कार्य के अनुसार बदलते रहता है। योगवसिष्ठ में मन के बहुत सारे नाम का वर्णन किया है, जिसमें कुछ प्रमुख नाम हैं- बुद्धि, अहंकार, कर्म, कल्पना, वासना, अविद्या, माया, प्रकृति, जीव आदि हैं।

योगवसिष्ठ के अनुसार मन के विकार वैसे मानसिक प्रवृत्ति हैं, जो मनुष्य के चित (मन) को उनके मूल विषयों से विक्षिप्त, सांसारिक विषयों के प्रति आकर्षण एवं मन के आसक्ति की भावना उत्पन्न करती हैं। इनमें, चित की चंचलता, मोह, अहंकार, अविद्या, वासना, संकल्प आदि मन के प्रमुख विकार हैं। मन के सभी विकारों का मूल मोह का बताते हुए कहते हैं कि “सभी व्याधियों का मूल मोह है। विषयों में आसक्ति, शरीर में अहंबुद्धि अज्ञान होने कारण

अविवेकता उत्पन्न होती है। जन्म-मरण रूपी संसार, हर्ष, शोक, लोभ, मोह सभी मिथ्या अहंकार भाव के कारण होते हैं।” (कुमार, 2023, p. 64) वहीं महर्षि मन के विकारों का वर्णन करते हुए कहते हैं कि-

### सङ्कल्पनं मनोबन्धस्तदभावो विमुक्तता

॥6,2/1/27॥” (वाल्मीकि, 2020, p.04)

**अर्थात्** महर्षि वसिष्ठ संकल्प को मन का विकार बताते हुए कहते हैं कि संकल्प ही मन के बंधन का है।

महर्षि वसिष्ठ वासना एवं अज्ञान को मन का मुख्य विकार में से एक मानते हैं। आत्रेय जी अपने पुस्तक योगवसिष्ठ और उसके सिद्धान्त में वर्णन करते हुए कहते हैं कि “गडढे के कछुओं के सामान जब तक अज्ञानी मन आत्मा को भूल कर मूर्खतावश भोगों के मार्ग पर चलता रहता है, तब तक संसाररूपी अंधेरा किसी प्रकार भी धूर नहीं सों सकता।” (अत्रे, 1957, पृष्ठ-261) इस

जगत में मनुष्य अज्ञान वश भिन्न-भिन्न प्रकार की वासनाओं में लिप्त हो जाता है। जो मन के प्रमुख विकारों में से एक है। मन में वासनाओं के प्रबल होने के कारण मनुष्य फल की इच्छा से कर्म करता है, जो मनुष्य जीवन में बंधन का मुख्य कारण है। महर्षि वसिष्ठ वासना का वर्णन करते हुए कहते हैं कि

### वासनामात्रसारत्वादज्ञस्य सफलाः क्रियाः । सर्वा एवाफला ज्ञस्य वासनामात्र सङ्ख्यात्

॥6,1/87/18॥” (वाल्मीकि, 2020, p.345)

**अर्थात्** वासना से युक्त होने के कारण अज्ञानी मनुष्य के सभी कार्य सफल हो जाती हैं। परन्तु अज्ञानी जो भी कर्म करता है, वह उसे जन्म-मरण बंधन में बंधता है, क्योंकि मनुष्य के मन से वासनाओं का क्षीण नहीं होता है। इस प्रकार से हम कह सकते हैं कि उपर्युक्त में वर्णित विषय मन के विकार के रूप में है।

**मनो निग्रह के उपाय-** सम्पूर्ण योगवसिष्ठ ग्रंथ में महर्षि वसिष्ठ और राम के बीच के संवाद के रूप में है। जिसमें मुख्य रूप से मन, वासना, विवेक, वैराग्य, आत्मज्ञान, मोक्ष जैसे विषयों का वर्णन किया गया है। योगवसिष्ठ के अनुसार इस जगत में जीवन एवं मुक्ति का मुख्य कारण मन है। योगवसिष्ठ के अनुसार चित की चंचलता

के कारण ही मनुष्य का मन विचलित होता है, जिसके बाद मन में विषयों के प्रति आसक्ति, वासना, राग-द्वेष आदि उत्पन्न होता है। जिसके कारण मन में भिन्न-भिन्न प्रकार के विकार उत्पन्न होता है। महर्षि वसिष्ठ चित का वर्णन करते हुए कहते हैं कि

### चित्तं कारणमर्थानां तस्मिन्सति जगत्त्रयम् । तस्मिन् क्षीणे

जगत्क्षीणं तच्चिकित्स्यं प्रयत्नतः ॥1/16/25

**अर्थात्** “चित ही सब पदार्थों का कारण है, इसके रहने पर तीनों लोकों का भान होता है और उसके क्षीण हो जाने पर जगत भी क्षीण हो जाता है इसलिये इस चित को बड़े यत्न से रोकना चाहिए।” (वाल्मीकि, 2020, p.49) इसका तात्पर्य है कि चित (मन) के निग्रह कर लेने पर इस संसार में उत्पन्न होने वाले वासना, राग-द्वेष आदि क्षीण हो जाती हैं।

**योगवसिष्ठ में मनो निग्रह-** योगवसिष्ठ के अनुसार मन ही इस सम्पूर्ण संसार, शरीर, प्रकृति का कारन है, इन सभी का निर्माण मन के द्वारा ही किया गया है। यहाँ तक की मुक्ति और बंधन का कारण भी मन ही है। योगवसिष्ठ में मन निग्रह के लिये चितशुद्धि, वासनाओं का नाश, आत्मज्ञान जैसे शब्दों का वर्णन किया गया है। महर्षि वसिष्ठ के अनुसार मनुष्य को सबसे पहले अपनी चित (मन) को शुद्ध करने का प्रयास करना चाहिए, जिससे मन में उत्पन्न होने वाले भाँति प्रकार विकार समाप्त हो जाये। योगवसिष्ठ में मनो निग्रह के लिये निम्नलिखित उपायों का वर्णन किया गया है, जिसमें से कुछ प्रमुख उपाय इस प्रकार हैं-

**विवेक एवं आत्मविचार-** योगवसिष्ठ के अनुसार विवेक मनो निग्रह के लिये प्रथम एवं महत्वपूर्ण उपाय है। महर्षि वसिष्ठ विवेक का वर्णन करते हुए कहते हैं-

### पूर्व राघव शाखेण वैराग्येण परेण च । तथा सज्जनसङ्गेन

नीयतां पुण्यतां मनः ॥1/6/14॥” (वाल्मीकि, 2020.)

**अर्थात्** सर्वप्रथम मनुष्य को शास्त्रों को सुनकर, सज्जन और महात्माओं का सत्संग के माध्यम से अपने मन को वैराग्य पूर्ण एवं पवित्र स्थिति प्रयुक्त करना चाहिए। इसका पालन करने पर मनुष्य को धीरे धीरे सत्य-असत्य का भान होता है, जिसके पश्चात् मनुष्य में विवेक की भावना उत्पन्न होती है। महर्षि वसिष्ठ कहते हैं कि

## ते महान्तो महाप्राज्ञा निमित्तेन विनैव हि। वैराग्यं जायते येषां तेषां ह्यमलमानसम् ॥2/11/24॥

**अर्थात्** “जिनको बिना निमित्त केवल विवेक से ही वैराग्य उत्पन्न होता है, वे ही महात्मा हैं, वहीं बुद्धिमान हैं और उनका ही मन निर्मल होता है।” (वाल्मीकि, 2020, p.146) विवेक की उत्पत्ति के बाद मनुष्य का मन सत्य-असत्य, नित्य-अनित्य के बिच अंतर करने में समर्थवान हो जाता है। जिसके बाद साधक के मन वैराग्य का भाव एवं आत्माविचार के प्रति रूचि बढ़ती है।

**वैराग्य एवं वासनाक्षय-** योगवसिष्ठ में वैराग्य को विवेक का आधार माना गया है। जब तक किसी साधक में विवेक की उत्पत्ति नहीं होती है, तब तक वैराग्य उत्पन्न नहीं हो सकता है। महर्षि योगवसिष्ठ में वर्णन करते हुए कहते हैं कि

**वैराग्यं येऽधिगच्छन्ति त एव पुरुषोत्तमाः ॥2/11/26**

**अर्थात्** “जिनको विवेक द्वारा इस सांसार की रचना को विचार करने से वैराग्य उत्पन्न होता है, वे ही उत्तम पुरुष हैं।” (वाल्मीकि, 2020, p.147) मनुष्य के मन में वैराग्य उत्पन्न होने के पश्चात मनुष्य मानसिक रूप से इस सांसार के अनित्य विषयों के प्रति आसक्त नहीं होता, जो मनुष्य के मानसिक मुक्ति का मुख्य कारण बनती है। योगवसिष्ठ में इस सांसार को सुख के बाद दुःख और दुःख के बाद सुख एक क्रमिक स्वरूप बताया गया है। महर्षि वसिष्ठ योगवसिष्ठ वर्णन करते हैं, कि

**विवेकं परमाश्रित्य वैराग्याभ्यासयोगतः ।**

**संसारसरितं घोरामिमामापदमुत्तरेत् ॥2/13/31॥**

**अर्थात्** “प्राणी को यही उचित है कि वे वैराग्य और अभ्यास के सम्बंध से उत्तम विवेक आश्रय लेकर इस सांसार की आपतिरूप नदी के पर उतरे।” (वाल्मीकि, 2020, p.156) सांसारिक विषयों के प्रति आसक्ति समाप्त होने के बाद मनुष्य के सम्पूर्ण रूप से वासना का क्षय हो जाता है।

**चित्तशुद्धि एवं आत्मज्ञान-** योगवसिष्ठ में मन के निग्रह के लिए महर्षि वसिष्ठ मुक्ति के चार द्वार पल का वर्णन करते हैं। महर्षि वसिष्ठ कहते हैं की यदि कोई मनुष्य इस चार द्वार पाल में से अगर किसी एक भी द्वार पाल का श्रद्धा पूर्वक पालन कर लेता है तो

उसका चित (मन) पूर्ण रूप से शुद्ध एवं शांत हो जायेगा। महर्षि वसिष्ठ कहते हैं कि-

**सन्तोषः साधुसङ्गश्च विचारोऽथ शमस्तथा । एत एव  
भवाम्भोधावुपायास्तरणे नृणाम् ॥2/16/18**

**अर्थात्** “संसार रूपी समुद्र से मनुष्य को पार उतरने के लिए संतोष, साधुसंग, विचार और शम ये चारो ही उत्तम उपाय हैं।” (वाल्मीकि, 2020, p.170) इसके पश्चात महर्षि वसिष्ठ कहते हैं कि “इनमे से एक भी उपाय का अभ्यास किया जाये तो वह भी फल दायक होता है और यदि दृढ़ता को प्राप्त हो जाये तो व्याकुल चित के सम्पूर्ण दोष शीघ्र ही नष्ट हो जाते हैं।” (वाल्मीकि, 2020, p.171) योगवसिष्ठ के अनुसार चित शुद्धि एवं आत्मज्ञान का बहुत बड़ा सम्बंध है। महर्षि वसिष्ठ वर्णन करते हुए कहते हैं कि

**चित्तं वृत्तिविहीनं ते यदा यातमचित्तताम् । तदा**

**मोक्षमबीमन्तः सत्तामाप्नोषि तं वताम् ॥ (1।21।26)**

**अर्थात्** “जब चित (मन) वृत्तिहिन होकर चित भाव को त्याग देता है, तब अपने भीतर विस्तृत आकारवाली मोक्षमयी आत्मसत्ता का अनुभव करता है।” (अत्रे, 1957, पृष्ठ-260, 261)

अतः हम कह सकते हैं कि उपर्युक्त में वर्णन किए गये विषय मनो निग्रह के लिए उपयुक्त हैं।

**निष्कर्ष-** उपर्युक्त अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि मन ही सम्पूर्ण जीवन एवं इस जीवन में होने वाले अनुभव का मुख्य आधार है। वर्तमान समय में बढ़ते मानसिक अस्थिरता, तनाव एवं चकाचौंध भरी दुनिया में वा पीड़ित मनुष्य के लिए आज योगवसिष्ठ में वर्णित मन किसी राम वान से कम नहीं है। इसका मुख्य कारण योगवसिष्ठ में वर्णित मन, जिसमें मुख्य रूप से विवेक-वैराग्य से लेकर संतोष एवं सत्संग तक का वर्णन कर मन को स्वस्थ एवं शांत रखे का वर्णन किया है। योगवसिष्ठ के अनुसार मन ही कर्म-बंधन, राग-द्वेष, जन्म-मरण आदि का मुख्य कारन है। जबकि विवेक-वैराग्य, वासनाक्षय, चित्तशुद्धि एवं आत्मज्ञान के द्वारा मन का निग्रह संभव है। मन की शुद्धि एवं निर्मलता के पश्चात ही मनुष्य इस संसार के दुखों से निवृत्त हो सकता है।

अतः हम कह सकते हैं कि योगवसिष्ठ में वर्णित मन, उसके निग्रह और आत्मविचार आदि का जो वर्णन किया गया है, वो आज

के समय में सभी मनुष्यों के लिये जीवन मार्गदर्शक के रूप में अपना योगदान प्रदान करती है।

## सन्दर्भ ग्रंथ सूची

- [1] अत्रे, बी. एल. (1957). योग वशिष्ठ और उसके सिद्धांत. तारा प्रिंटिंग वर्क्स।
- [2] अभयानन्द सरस्वती, स्वामी. (2012). अमृतनाद उपनिषद्. श्री शौनक सुधा प्रकाश समिति।
- [3] गोयन्दका, हनुमान प्रसाद (व्याख्याकार). (2005). ईशादि नौ उपनिषद्. गीता प्रेस।
- [4] गुलेरिया, प. (2025). योग वासिष्ठ में वर्णित मनोदैहिक रोगों की अवधारणा एवं उपचार पद्धति का विश्लेषणात्मक अध्ययन. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ सोशल साइंस एंड एजुकेशन रिसर्च, 7(1), 954–956.  
<https://doi.org/10.33545/26649845.2025.v7.i1l.349>
- [5] कुमार, अ. (2023). श्रीरामचरितमानस में वर्णित मानस रोग (वेदना) एवं उसके प्रशमन के उपाय. संग्याहरण शोध: इंटरनेशनल पीयर रिव्यूड, 26(2), 64–68।
- [6] पतञ्जलि. (2007). योग दर्शन (हनुमान प्रसाद गोयन्दका, व्याख्याकार). गीता प्रेस।
- [7] भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद, ए. सी. (1972). भगवद्गीता यथारूप (Bhagavad-gītā As It Is). भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट।
- [8] महेन्द्र कुमार शर्मा. (2022). योगवासिष्ठ महारामायण में मन का स्वरूप. प्रैक्सिस इंटरनेशनल जर्नल ऑफ सोशल साइंस एंड लिटरेचर, 5(6).  
<https://doi.org/10.51879/PIJSSL/050616>
- [9] शर्मा शरणानन्द, वि. (1998). योगवासिष्ठ-सुधा. मानसी प्रकाशन।
- [10] यादव, आ. (2025). योग वशिष्ठ और आधुनिक मनोविज्ञान के अनुसार मन का स्वभाव. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इनोवेशन्स एंड रिसर्च एनालिसिस (IJIRA), 5(2, भाग II), 114–118.  
[https://doi.org/10.62823/IJIRA/5.2\(II\).7711](https://doi.org/10.62823/IJIRA/5.2(II).7711)
- [11] वाल्मीकि. (2020). योगवासिष्ठ-महारामायण (पं. श्री ठाकुरप्रसाद द्विवेदी, अनुवादक). चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान।